

प्रतिवेद्य

दिल्ली उच्च न्यायालय : नई दिल्ली

रिट याचिका (सिविल) सं. 12758/2005 और 8219/2006

निर्णय की तिथि : 1 अगस्त, 2008

रितु सेनगुप्ता..... याचिकाकर्ता रि.या. सि. 12758/2005 में।

आशीष गोयल..... याचिकाकर्ता रि.या. सि. 8219/2006 में।

द्वारा : भारत भूषण जैन सह श्री विक्रम
नंदराजोग, अधिवक्तागण।

बनाम

दिल्ली नगर निगम प्रत्यर्थी।

द्वारा : सुश्री अमिता गुप्ता और नवीन गुप्ता,
अधिवक्तागण।

कोरम:

माननीय न्यायमूर्ति श्री संजीव खन्ना

1. क्या स्थानीय समाचार पत्रों के संवाददाताओं को निर्णय देखने की अनुमति दी जा सकती है?
2. रिपोर्टर को संदर्भित किया जाना है या नहीं? हाँ
3. क्या निर्णय डाइजेस्ट में प्रकाशित किया जाना चाहिए? हाँ

न्या. श्री संजीव खन्ना

1. उपरोक्त दोनों रिट याचिकाओं के तर्कों पर एक साथ सुनवाई की गई तथा विचारार्थ समान विधिक मुद्दे उठने के कारण, उनका निपटान इस साझा निर्णय द्वारा किया जा रहा है।
2. रिट याचिका (सिविल) सं. 8219/2006 में शामिल संपत्ति एचएस-11, पंचशील पार्क, नई दिल्ली (इसके पश्चात् संक्षेप में पंचशील संपत्ति के रूप में संदर्भित) है और रिट याचिका (सिविल) सं. 12758/2005 में शामिल संपत्ति सी-6/5, वसंत विहार, नई दिल्ली (इसके पश्चात् संक्षेप में वसंत विहार संपत्ति के रूप में संदर्भित) है।
3. 1 जुलाई, 1999 के निर्धारण आदेश द्वारा पंचशील संपत्ति का वार्षिक आनुपातिक-मूल्य 17,14,580/- रुपये निर्धारित किया गया था। इसी प्रकार, 1 अप्रैल, 2002 के निर्धारण आदेश द्वारा वसंत विहार संपत्ति का वार्षिक आनुपातिक-मूल्य 1 अप्रैल, 1998 से 6,12,000/- रुपये, 1 अप्रैल, 1999 से 10,45,500/- रुपये, 10 अक्टूबर, 1999 से 11,22,000/- रुपये तथा 10 अप्रैल, 2000 से 11,31,300/- रुपये निर्धारित किया गया था। याचीगण द्वारा यह स्वीकार किया गया है कि इस प्रकार निर्धारित आनुपातिक-मूल्य दिल्ली नगर निगम अधिनियम, 1957 (संक्षेप में अधिनियम) तथा उस समय लागू उप-नियमों के अनुसार था। याचीगण ने उक्त आनुपातिक-मूल्यों को स्वीकार कर लिया है तथा उन्हें चुनौती नहीं दी है। याचीगण का यह प्रतिविरोध नहीं है कि आनुपातिक मूल्य गलत तरीके से तय किए गए थे।

4. पंचशील संपत्ति के संबंध में, प्रत्यर्थी-एम.सी.डी. ने 1 अप्रैल, 2001 से आनुपातिक मूल्य को 17,14,580 रुपये से बढ़ाकर 30,00,000 रुपये करने के लिए अधिनियम की धारा 126 के अंतर्गत एक नोटिस जारी किया था। वसंत विहार संपत्ति के मामले में, 1 अप्रैल, 2001 से आनुपातिक मूल्य को बढ़ाकर 25,00,000 रुपये करने के लिए अधिनियम की धारा 126 के अंतर्गत एक नोटिस जारी किया गया था।

5. जबकि वृद्धि के दो प्रस्ताव लंबित थे, संपत्ति कर से संबंधित अधिनियम के उपबंध में दिल्ली नगर निगम (संशोधन) अधिनियम, 2003 द्वारा संशोधन किया गया। संशोधनों के परिणामस्वरूप संपत्ति कर की गणना के आधार, तरीके और पद्धति में परिवर्तन हुआ। पूर्व-संशोधित उपबंधों के अंतर्गत, संपत्ति कर वार्षिक आनुपातिक मूल्य पर देय था, जिसके लिए वार्षिक किराये का निर्धारण करना आवश्यक था, जिस पर भूमि या भवन को वर्ष-दर-वर्ष किराये पर देना उचित रूप से स्वीकार किया जा सकता था। अधिनियम और तत्कालीन लागू उपनियमों के अनुसार, वार्षिक आनुपातिक मूल्य या तो निर्माण की लागत और निर्माण के समय भूमि की लागत या विक्रय मूल्य के आधार पर किराया विधान के अंतर्गत देय काल्पनिक किराये के आधार पर या प्राप्त वार्षिक किराये के आधार पर निर्धारित किया जाता था। संशोधित उपबंधों के अंतर्गत, एक नई पद्धति, जिसे आमतौर पर इकाई क्षेत्र पद्धति के रूप में जाना जाता है, शुरू की गई थी। इस नई पद्धति के अंतर्गत, संपत्ति के स्थान और आकार के आधार पर और उपयोगकर्ता, निर्माण की तिथि आदि के आधार पर गुणकों को लागू करके संपत्ति के वार्षिक मूल्य की गणना की जाती है।

6. दिल्ली नगर निगम (संशोधन) अधिनियम, 2003 1 अप्रैल, 2004 से लागू हुआ। हालाँकि, अधिनियम की धारा 116छ में अस्थायी उपबंध भी दिए गए हैं, जो निम्नानुसार हैं:-

"116छ अस्थायी उपबंध -

दिल्ली नगर निगम (संशोधन) अधिनियम, 2003 द्वारा संशोधित इस अधिनियम में किसी बात के होते हुए भी, दिल्ली नगर निगम (संशोधन) अधिनियम, 2003 के लागू होने की तिथि से तुरंत पहले इस अधिनियम के अंतर्गत खाली भूमि या भवन के ढके हुए स्थान या दोनों पर लगाया गया कर, दिल्ली नगर निगम (संशोधन) अधिनियम, 2003 के लागू होने पर, दिल्ली नगर निगम (संशोधन) अधिनियम, 2003 द्वारा संशोधित इस अधिनियम के अंतर्गत लगाया गया ऐसी खाली भूमि या भवन के ढके हुए स्थान या दोनों पर कर माना जाएगा, और तब तक लागू रहेगा जब तक कि ऐसा कर दिल्ली नगर निगम (संशोधन) अधिनियम, 2003 द्वारा संशोधित इस अधिनियम के उपबंधों के अनुसार संशोधित नहीं किया जाता है।

(2) उपधारा (1) में किसी बात के होते हुए भी, जहाँ दिल्ली नगर निगम (संशोधन) अधिनियम, 2003 के प्रारंभ की तिथि को किसी खाली भूमि या भवन के ढके हुए स्थान या दोनों के संबंध में निर्धारण को अंतिम रूप नहीं दिया गया है, निर्धारिती के पास यथास्थिति, ऐसी भूमि या भवन या दोनों हो सकेंगे, वार्षिक मूल्य के आधार पर निर्धारण किया जाता है।"

7. यह पक्षकारण का स्वीकृत मामला है कि दोनों मामलों में याचीगण ने धारा 116छ(2) के अंतर्गत अपने विकल्प का उपयोग किया था कि पंचशील संपत्ति के संबंध में दिनांक 1 अप्रैल, 2001 से 17,14,580 रुपये से 30,00,000 रुपये तक और वसंत विहार संपत्ति के मामले में दिनांक 1 अप्रैल, 2001 से 11,31,300 रुपये से 25,00,000 रुपये तक की वृद्धि के प्रस्तावों के संबंध में इकाई क्षेत्र पद्धति के अंतर्गत वार्षिक मूल्य के आधार पर निर्धारण किया जाए।

8. संयुक्त कर-निर्धारक और जिलाधिकारी ने पंचशील संपत्ति के मामले में दिनांक 22 फरवरी, 2005 के निर्धारण आदेश द्वारा प्रस्ताव का निपटान कर दिया, जिसमें दिनांक 1 अप्रैल, 2001 से वार्षिक मूल्य 8,03,099.88 रुपये निर्धारित किया गया है और वसंत विहार संपत्ति के मामले में दिनांक 13 जनवरी, 2005 के आदेश द्वारा दिनांक 1 अप्रैल, 2001 से वार्षिक मूल्य 5,03,067 रुपये निर्धारित किया गया है। इस प्रकार, दोनों मामलों में, दो निर्धारण आदेशों के परिणामस्वरूप, संपत्ति का वार्षिक मूल्य 17,14,580/- रुपये और 11,31,300/- रुपये के पहले के वार्षिक आनुपातिक मूल्यों के बजाय 8,03,099.88 रुपये और 5,03,067/- रुपये तय किया गया था। वृद्धि के बजाय, तय किए गए वार्षिक मूल्य पहले से तय वार्षिक आनुपातिक मूल्यों से बहुत कम थे। प्रत्यर्थी-एम.सी.डी. के पास उपलब्ध उचित उपाय या मार्ग यह था कि पंचशील संपत्ति के मामले में 17,14,580/- रुपये से 30,00,000/- रुपये और वसंत विहार संपत्ति के मामले में 11,31,300/- रुपये से 25,00,000/- रुपये तक की वृद्धि के प्रस्ताव को छोड़ दिया जाए। हैरानी की बात यह है कि संयुक्त कर-निर्धारक और जिलाधिकारी ने ऐसा नहीं किया और उन्होंने वृद्धि के प्रस्ताव के आधार पर निर्धारण को अंतिम रूप दिया और दोनों

संपत्तियों का वार्षिक मूल्य निर्धारित किया जो पहले से तय संपत्तियों के वार्षिक आनुपातिक मूल्यों से बहुत कम था। ये आदेश क्यों पारित किए गए या कोई सुधारात्मक कदम क्यों नहीं उठाए गए, इसका उत्तर प्रत्यर्थी-एम.सी.डी. ने नहीं दिया है। यह न्यायालय इस प्रश्न की परीक्षा या उत्तर नहीं दे रहा है कि क्या कोई सुधारात्मक कदम उठाया जा सकता है और क्या परिसीमा या अतिविलंब बाधाएँ, यदि कोई हो, उपाय का वर्जन कर सकते हैं। इन प्रश्नों को अनिर्णीत छोड़ दिया गया है।

9. दोनों याचीगण ने 1 अप्रैल, 2001 से लेकर तब तक की अवधि के लिए स्वेच्छा से संपत्ति कर का भुगतान करना जारी रखा था जब तक कि संयुक्त कर-निर्धारक और जिलाधिकारी ने रिट याचिका (सिविल) सं. 2819/2006 और 12758/2005 में क्रमशः 22 फ़रवरी, 2005 और 13 जनवरी, 2005 को निर्धारण आदेश पारित नहीं कर दिए थे। ये भुगतान पंचशील और वसंत विहार में संपत्ति के लिए 17,14,580/- रुपये और 11,31,300/- रुपये के वार्षिक आनुपातिक मूल्य पर किए गए थे। 1 अप्रैल, 2001 से पूर्वव्यापी प्रभाव से तय किए गए नए वार्षिक मूल्यों के परिणामस्वरूप, याचीगण का दावा है कि वे प्रतिदाय के हकदार हैं क्योंकि अब तय किया गया वार्षिक मूल्य उस वार्षिक आनुपातिक मूल्य से बहुत कम था, जिस पर उन्होंने कर चुकाया था।

10. प्रत्यर्थी-एम.सी.डी. ने 22 फ़रवरी, 2005 और 13 जनवरी, 2005 के निर्धारण आदेश पारित होने के बाद संगणना की और बिल जारी किए। जारी किए गए बिलों में, पंचशील संपत्ति के मामले में 8,23,060/- रुपये की राशि को अतिरिक्त भुगतान के रूप में दर्शाया गया था। प्रत्यर्थी-एम.सी.डी. भविष्य के

वर्षों के लिए पंचशील संपत्ति के लिए देय संपत्ति कर से इस अतिरिक्त भुगतान को समायोजित कर रहा है। आंशिक समायोजन किया गया है, लेकिन कुछ राशि अभी भी "प्रतिदाय" है। वसंत विहार संपत्ति के मामले में, प्रतिदाय राशि 3,01,552/- रुपये थी। उक्त प्रतिदाय राशि को भविष्य के वर्षों के लिए देय संपत्ति कर में समायोजित किया गया है। समायोजन 8 फ़रवरी, 2007 के आदेश में दर्ज किया गया है। याचीगण के विद्वान अधिवक्ता ने न्यायालय के समक्ष कहा था कि पहले किए गए अतिरिक्त भुगतान का समायोजन किया गया था और केवल एक ही प्रश्न पर विचार करने की आवश्यकता थी कि कर की दर क्या है।

11. याचीगण द्वारा उठाए गए तीन प्रश्न हैं: (i) क्या याचीगण/निर्धारिती संपत्ति कर का अधिक भुगतान करने की स्थिति में प्रतिदाय के हकदार हैं; (ii) क्या प्रत्यर्थी-एम.सी.डी. उनके द्वारा रखी गई अतिरिक्त राशि पर ब्याज का भुगतान करने के लिए उत्तरदायी हैं और (iii) ऐसे मामले में जहाँ धारा 116छ (2) के अंतर्गत वार्षिक मूल्य पर निर्धारण किया गया था, कर की क्या दर लागू है।

प्रतिदाय:

12. याचीगण के विद्वान अधिवक्ता ने अधिनियम की धारा 123ख(9) पर मेरा ध्यान आकर्षित किया था, जिसमें अनुबंधित किया गया है कि निर्धारण को अंतिम रूप देने के बाद, यदि यह पाया जाता है कि अतिरिक्त भुगतान किया गया था, तो ऐसी अतिरिक्त राशि वापस की जानी चाहिए। अधिनियम की धारा 123ख निम्नानुसार है:-

**"स्व-निर्धारण और विवरणी जमा करना - (1) दिल्ली
नगर निगम (संशोधन) अधिनियम, 2003 के लागू**

होने के पश्चात्, किसी खाली भूमि या भवन के ढके हुए स्थान का स्वामी या संपत्ति कर का भुगतान करने के लिए उत्तरदायी कोई अन्य व्यक्ति या ऐसे स्वामी या व्यक्ति की अनुपस्थिति में कोई अधिभोगी, उक्त अधिनियम के लागू होने के साठ दिनों के भीतर स्व-निर्धारण विवरणी दाखिल करेगा।

2. ऐसा स्वामी या अन्य व्यक्ति या अधिभोगी, जैसा भी मामला हो, तत्पश्चात् वार्षिक विवरणी केवल उन मामलों में दाखिल करेगा, चाहे पिछले रिटर्न की तुलना में स्थिति में कोई परिवर्तन हुआ हो, उस वित्तीय वर्ष की समाप्ति के पश्चात् तीन महीने के भीतर जिसमें स्थिति में परिवर्तन हुआ है।

3. भवन के किसी भी ढके हुए स्थान या खाली भूमि का कोई भी स्वामी या संपत्ति कर का भुगतान करने के लिए उत्तरदायी कोई अन्य व्यक्ति, या ऐसे स्वामी या व्यक्ति की अनुपस्थिति में कोई अधिभोगी, जैसा भी मामला हो, धारा 114क या धारा 114ग के अंतर्गत देय कर की गणना करेगा और उस वित्तीय वर्ष के 30 जून, 30 सितंबर, 31 दिसंबर और 31 मार्च तक समान त्रैमासिक किश्तों में उसका भुगतान करेगा जिसके लिए कर का भुगतान किया जाना है। वित्तीय वर्ष के लिए कर का भुगतान वित्तीय वर्ष के 30 जून तक एकमुश्त किए जाने की स्थिति में, निगम द्वारा अधिसूचित कुल देय कर राशि पर पंद्रह प्रतिशत से अधिक नहीं की जाने वाली छूट दी जाएगी।

4. किसी खाली भूमि या भवन के ढके हुए स्थान का कोई स्वामी या संपत्ति कर का भुगतान करने के लिए उत्तरदायी कोई अन्य व्यक्ति या ऐसे स्वामी या व्यक्ति की अनुपस्थिति में कोई अधिभोगी, जो इस धारा के अधीन ऐसे संपत्ति कर की संगणना करता है, ऐसी संगणना के आधार पर, ऐसी खाली भूमि या भवन के

ढके हुए स्थान पर, यथास्थिति, संपत्ति कर का भुगतान ब्याज सहित, यदि कोई हो, इस अधिनियम के उपबंधों के अधीन निम्नलिखित स्थितियों में देगा-

(क) कोई भी नया भवन या मौजूदा भवन जिसका निर्धारण नहीं किया गया है; या

(ख) कोई भी विद्यमान भवन जिसके अंतिम निर्धारण के पश्चात पुनर्विकास किया गया है या जिसमें पर्याप्त परिवर्तन या सुधार किया गया है, किन्तु ऐसे पुनर्विकास, परिवर्तन या सुधार के परिणामस्वरूप निर्धारण में संशोधन नहीं किया गया है, जैसा भी मामला हो।

5. ऐसा स्वामी या व्यक्ति, जैसा भी मामला हो, आयुक्त को ऐसे प्रारूप में और ऐसे तरीके से स्व-निर्धारण विवरणी प्रस्तुत करेगा, जैसा कि उप-नियमों में निर्दिष्ट किया जा सकता है और प्रत्येक ऐसी विवरणी के साथ संपत्ति कर और ब्याज, यदि कोई हो, के भुगतान का सबूत संलग्न किया जाएगा।

6. दिल्ली नगर निगम (संशोधन) अधिनियम, 2003 के लागू होने के पश्चात्, किसी नए भवन के मामले में, जिसके लिए अधिभोग प्रमाण-पत्र प्रदान किया गया है या जो अधिभोग में है, ऐसा भुगतान किया जाएगा और ऐसी विवरणी, उस तिमाही की समाप्ति के तीस दिन के भीतर प्रस्तुत की जाएगी, जिसमें ऐसा अधिभोग प्रमाण-पत्र प्रदान किया गया है या ऐसा भवन अधिभोग में है, जो भी पहले हो।

स्पष्टीकरण:- संदेह को दूर करने के लिए, यह घोषित किया जाता है कि अधिभोग प्रमाणपत्र अनंतिम या अंतिम हो सकता है और यह पूरे भवन या उसके किसी भाग के लिए हो सकता है और अधिभोग पूरे भवन या उसके किसी भाग का हो सकता है।

7. धारा 116ड या धारा 116च के अंतर्गत खाली भूमि या भवन के ढके हुए स्थान के वार्षिक मूल्य के निर्धारण या धारा 123ग के अंतर्गत उसके संशोधन के बाद, इस धारा के अंतर्गत स्व-निर्धारण पर भुगतान की गई कोई भी राशि दिल्ली नगर निगम (संशोधन) अधिनियम, 2003 द्वारा संशोधित इस अधिनियम के अंतर्गत ऐसे निर्धारण के कारण भुगतान की गई मानी जाएगी।

8. यदि कोई स्वामी या अन्य व्यक्ति, जो इस अधिनियम के अधीन संपत्ति कर का भुगतान करने के लिए उत्तरदायी है, इस धारा के उपबंधों के अनुसार उसे उस पर ब्याज सहित, यदि कोई हो, भुगतान करने में असफल रहता है, तो वह किसी अन्य कार्रवाई पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, जिसके वह अध्यक्षीन हो, ऐसे संपत्ति कर या ब्याज या दोनों के संबंध में, जो भुगतान न किया गया हो, चूककर्ता समझा जाएगा और ऐसे चूककर्ता पर लागू इस अधिनियम के सभी उपबंध तदनुसार उस पर लागू होंगे।

9. यदि इस अधिनियम के अधीन किसी भूमि या भवन के ढके हुए स्थान के वार्षिक मूल्य के अंतिम निर्धारण के पश्चात्, इस धारा के अधीन स्व-निर्धारण पर भुगतान, करदाता द्वारा देय राशि से कम पाया जाता है, तो करदाता अंतिम निर्धारण की तिथि से दो महीने के भीतर अंतर का भुगतान करेगा, अन्यथा इस अधिनियम के उपबंधों के अनुसार वसूली की जाएगी, किंतु अंतिम निर्धारण के पश्चात् यदि यह पाया जाता है कि करदाता ने अधिक राशि का भुगतान किया है, तो ऐसी अतिरिक्त राशि वापस कर दी जाएगी:

परंतु किसी मामले में जहाँ अंतिम निर्धारण में निर्धारित कर की राशि स्व-निर्धारण के अंतर्गत भुगतान किए गए कर की राशि से अधिक है, और कर

की राशि में अंतर, आयुक्त की राय में, उप-विधियों में परिभाषित तथ्यों के जानबूझकर छिपाने का परिणाम है, आयुक्त कर में ऐसे अंतर पर ब्याज के अतिरिक्त तीस प्रतिशत से अधिक जुर्माना लगा सकता है:

आगे यह भी प्रावधान है कि ऐसे दंड का उद्ग्रहण इस अधिनियम के अधीन उपबंधित किसी अन्य दंड के अतिरिक्त होगा:

यह भी प्रावधान है कि नोटिस भेजने, आपत्ति की सुनवाई करने तथा कर एवं शास्तियों के निर्धारण की प्रक्रिया ऐसी होगी, जैसी उप-नियमों में विनिर्दिष्ट की जाए।

10. जहाँ आयुक्त द्वारा धारा 123ग के अधीन उस वर्ष के पश्चात्, जिससे ऐसा स्व-निर्धारण संबंधित है, बारह महीनों के भीतर कोई नोटिस नहीं भेजा जाता है, वहाँ ऐसा स्व-निर्धारण इस अधिनियम के अधीन किया गया निर्धारण माना जाएगा:

परंतु किसी भी मामले में, जहाँ तथ्यों को जानबूझकर छिपाया गया हो, देय कर के तीस प्रतिशत तक जुर्माना लगाया जा सकेगा:

आगे यह भी प्रावधान है कि नोटिस भेजने, आपत्ति की सुनवाई करने तथा कर एवं शास्तियों के निर्धारण की प्रक्रिया ऐसी होगी, जैसी उप-नियमों में विनिर्दिष्ट की जाए।

13. धारा 123ख(9) वार्षिक मूल्य अर्थात् इकाई क्षेत्र पद्धति के आधार पर की गई संगणना से संबंधित है। निस्संदेह, पारित किए गए दो निर्धारण आदेश वार्षिक मूल्य या इकाई क्षेत्र विधि पर हैं। अधिनियम की धारा 123ख(9) के अंतर्गत, प्रत्यर्थी-एम.सी.डी. प्रतिदाय के लिए उत्तरदायी है और उसे चुकाए गए

अतिरिक्त कर को वापस करना चाहिए था। प्रत्यर्थी-एम.सी.डी. को प्रतिदाय राशि की गणना करने के बाद अतिरिक्त भुगतान को रोककर नहीं रखना चाहिए था। प्रत्यर्थी-एम.सी.डी. ने अधिनियम की धारा 123ख(9) की स्पष्ट भाषा के विपरीत कार्य किया है। स्पष्ट कानूनी उपबंध को ध्यान में रखते हुए, मैं सामान्य विधि अधिकारों, संविदा अधिनियम, 1872 की धारा 72 के अंतर्गत प्रत्यास्थापन के अधिकार या अन्यायपूर्ण संवर्धन के सिद्धांत के अंतर्गत जाँच नहीं कर रहा हूँ। याचीगण के प्रति निष्पक्ष होने के लिए ये विवाद प्रत्यर्थी-एम.सी.डी. द्वारा नहीं उठाए गए थे, बल्कि न्यायालय द्वारा याचीगण के सामने रखे गए थे।

14. वसंत विहार संपत्ति के मामले में, भुगतान की गई अतिरिक्त राशि को पहले ही समायोजित किया जा चुका है और इसलिए उक्त मामले में प्रतिदाय का कोई आदेश पारित करने की आवश्यकता नहीं है। पंचशील संपत्ति के मामले में, कुछ राशि प्रतिदेय है और प्रत्यर्थी-एम.सी.डी. उसकी गणना करेगा और देय और अतिरिक्त देय भुगतान वापस करेगा।

ब्याज

15. ब्याज से संबंधित प्रश्न को दो अवधियों में विभाजित किया जा सकता है, अर्थात्, वर्तमान रिट याचिका दायर करने से पहले की अवधि और वादकालीन ब्याज और भविष्य का ब्याज। इस प्रश्न का निर्णय करने के लिए, अधिनियम की धारा 123ख और 152 का संदर्भ लेना प्रासंगिक होगा। धारा 123ख को ऊपर उद्धृत किया गया है और अधिनियम की धारा 152, निम्नानुसार है: -

152. करों के भुगतान का समय और तरीका - (1)

इस अधिनियम में अन्यथा उपबंधित के सिवाय, इस

अधिनियम के अधीन उद्घोषित कोई कर ऐसी तिथियों को, ऐसी संख्या में किस्तों में, तथा ऐसी रीति से देय होगा जैसा कि इस निमित्त बनाए गए उपनियमों द्वारा अवधारित किया जाए:

परंतु यदि दिल्ली नगर निगम (संशोधन) अधिनियम, 2003 के प्रवृत्त होने पर, दिल्ली नगर निगम (संशोधन) अधिनियम, 2003 के प्रवृत्त होने से ठीक पहले संदत्त की जा रही या संदेय संपत्ति कर की राशि में कोई वृद्धि होती है तो संपत्ति कर की राशि में पचास प्रतिशत से अधिक का अंतर, भुगतान किए जा रहे या देय कर से ऊपर की राशि को संपत्ति कर में ऐसी वृद्धि की राशि को तीन से विभाजित करके तीन वर्षों की अवधि में चरणों में प्रभावी/समाविष्ट किया जाएगा, यह भाग, दिल्ली नगर निगम (संशोधन) अधिनियम, 2003 के लागू होने से ठीक पहले देय संपत्ति कर की राशि में तथा ऐसी वृद्धि के पश्चात् शेष दो उत्तरवर्ती वर्षों में क्रमशः देय संपत्ति कर की राशि में जोड़ा जाएगा।

(2) जहाँ इस अधिनियम के अंतर्गत संपत्ति कर के भुगतान के लिए उत्तरदायी कोई व्यक्ति-

(क) धारा 123ख की उपधारा (3) में निर्दिष्ट तिथि तक ऐसा कर; या

(ख) पूर्ववर्ती वित्तीय वर्ष के 31 मार्च तक कर, ब्याज और जुर्माने, यदि कोई हो, और कर की प्रकृति में किसी अन्य राशि का बकाया, भुगतान करने में विफल रहा है;

वह देय तिथि की समाप्ति से लेकर राशि के वास्तविक भुगतान तक की अवधि को सम्मिलित करते हुए प्रत्येक माह या उसके भाग के लिए एक प्रतिशत की दर से साधारण ब्याज का भुगतान करने के लिए उत्तरदायी होगा।"

16. ऊपर उल्लिखित उपबंधों में प्रतिदाय पर निर्धारिती को ब्याज का भुगतान करने का प्रावधान नहीं है। अधिनियम की धारा 123ख(9) में किए गए अधिक भुगतान के प्रतिदाय का प्रावधान है परंतु यह अनुबंधित नहीं किया गया है कि निर्धारिती द्वारा भुगतान किए गए अतिरिक्त कर पर किसी ब्याज का भुगतान किया जाएगा। दूसरी ओर, कुछ परिस्थितियों में एक निर्धारिती अधिनियम की धारा 152 के उपबंधों के अनुसार ब्याज का भुगतान करने के लिए उत्तरदायी हो सकता है। हमारा उक्त धाराओं की वैधता से कोई सरोकार नहीं है। मैं केवल उपबंधों की, जैसे वे विद्यमान हैं, व्याख्या कर रहा हूँ, और कि क्या उक्त उपबंधों के अंतर्गत प्रत्यर्थी-एम.सी.डी. दोनों अवधियों के लिए ब्याज का भुगतान करने के लिए उत्तरदायी है।

17. यदि किसी कानून में ऐसे ब्याज के भुगतान का प्रावधान नहीं है तो करदाता कर पर ब्याज पाने का हकदार नहीं है। 1995 (216) आई.टी.आर. 759 में प्रतिवेदित *मोदी इंडस्ट्रीज़ लिमिटेड बनाम सी.आई.टी.* के मामले में, माननीय उच्चतम न्यायालय ने नियमित निर्धारण शब्द को परीक्षित किया तथा इस प्रश्न पर विचार किया कि क्या करदाता स्व-कर निर्धारण कर, अग्रिम कर तथा स्रोत पर कर कटौती पर ब्याज पाने का हकदार है, अपीलीय आदेश के आधार पर, जिसके अंतर्गत कर निर्धारण अधिकारी द्वारा की गई वृद्धि को

अपास्त दिया गया था। आयकर अधिनियम, 1961 के उपबंधों की परीक्षा करने के बाद, उच्चतम न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि ब्याज का भुगतान केवल तभी किया जा सकता है जब कानून में इसके भुगतान का प्रावधान हो और यह टिप्पणी की गई थी कि साम्या में ब्याज देय नहीं है। यह अभिनिर्धारित किया गया कि:

58. यह तर्क, जो अब अपील के अधीन कुछ मामलों में बरकरार रखा गया था, यह है कि यदि करदाता को अग्रिम भुगतान की गई राशि पर ब्याज नहीं मिलता है, तो यह अनुचित होगा, जब अग्रिम भुगतान की गई राशि अपीलीय आदेश के अनुसार वापस कर दी जाती है। यह साम्या का प्रश्न नहीं है। कानून द्वारा प्रदान किए गए को छोड़कर प्रतिदाय पर ब्याज पाने का कोई अधिकार नहीं है। धारा 214 के अंतर्गत अग्रिम कर की अतिरिक्त राशि पर ब्याज कर के भुगतान की तिथि से नहीं दिया जाता है। न ही इसे प्रतिदाय की तिथि तक भुगतान किया जाता है। इसका भुगतान केवल नियमित निर्धारण की तिथि तक किया जाता है। स्रोत पर कटौती द्वारा एकत्र किए गए कर की अतिरिक्त राशि पर कोई ब्याज नहीं दिया जाता है। धारा 244 (1-क) की शुरुआत से पहले करदाता को कर के भुगतान की तिथि से आदेश की तिथि तक कोई ब्याज पाने का अधिकार नहीं था, जिसके परिणामस्वरूप कर की अतिरिक्त वसूली प्रतिदेय हो गई थी। धारा 243 या धारा 244 के अंतर्गत ब्याज केवल तभी देय था जब प्रतिदाय की तिथि तक निर्धारित अवधि के भीतर प्रतिदाय नहीं किया

गया था। लेकिन, यदि अपील में कर निर्धारण आदेश को कम कर दिया गया था, तो कर निर्धारण आदेश के अनुसार कर के भुगतान की तिथि से अपीलीय आदेश की तिथि तक कोई ब्याज देय नहीं था।

59. इसलिए, धारा 214 या अधिनियम की किसी अन्य धारा की व्याख्या इस धारणा पर नहीं की जानी चाहिए कि जब भी कोई राशि, जो कर प्राधिकरण द्वारा कानूनी शक्ति के प्रयोग में रोक ली गई है, किसी भी बाद की कार्यवाही के परिणामस्वरूप प्रतिदेय हो जाती है, तो उस पर ब्याज का भुगतान किया जाना चाहिए।”

18. ए.आई.आर. 1993 एस.सी. 2005 में प्रतिवेदित फ़ेरो एलायज़ कॉर्पोरेशन लिमिटेड बनाम आंध्र प्रदेश राज्य इलेक्ट्रिसिटी बोर्ड तथा अन्य में, उच्चतम न्यायालय ने इस बात को परीक्षित किया कि क्या इलेक्ट्रिसिटी बोर्ड में जमा राशि पर ब्याज अधिनियम, 1978, साम्या या सामान्य विधि के आधार पर ब्याज का दावा किया जा सकता है। यह टिप्पणी की गई कि सख्ती से कहें तो ब्याज केवल उन मामलों में देय होगा जहाँ देनदार और लेनदार के बीच संबंध है और पैसे का उधारदाता उधारकर्ता को कुछ निधियों का उपयोग करने की अनुमति देता है जिससे वह स्वयं को उक्त निधियों के उपयोग से वंचित कर लेता है। ब्याज उक्त निधियों के उपयोग के लिए एक प्रकार का किराया है। इंग्लैंड के हेल्सबरी लॉ का संदर्भ दिया गया, जिसमें यह टिप्पणी की गई है कि सामान्य विधि में ब्याज तब देय होता है जब भुगतान करने के लिए एक स्पष्ट अनुबंध या एक निहित अनुबंध होता है जिसे पक्षकारगण के बीच व्यवहार के दौरान, लेनदेन की प्रकृति, प्रथा या उपयोग या संविदा के उल्लंघन के लिए

नुकसानी के रूप में अनुमान लगाया जा सकता है। ब्याज के न्यायसंगत अधिकार के प्रश्न पर, निम्नानुसार यह टिप्पणी की गई:

"128. यदि यह स्थिति है, तो क्या साम्या या सामान्य विधि के अंतर्गत ब्याज का दावा किया जा सकता है? उपभोक्ताओं की ओर से तर्क यह है कि यदि किसी व्यक्ति के धन का उपयोग कोई और व्यक्ति करता है, तो वह उस अवधि के लिए ब्याज का भुगतान करने के लिए बाध्य है। हेल्सबरी, खंड 32 (पृष्ठ 53, पैरा 106) "ब्याज" को "किसी व्यक्ति द्वारा किसी अन्य व्यक्ति से संबंधित या बकाया राशि के उपयोग या प्रतिधारण के लिए प्रतिदाय या प्रतिकर" के रूप में परिभाषित करता है...

129. दृढ़ता से कहें तो, "ब्याज" शब्द केवल दो मामलों में लागू होगा जहाँ देनदार और लेनदार का संबंध है। धन का एक उधारदाता जो उधारकर्ता को कुछ निधियों का उपयोग करने की अनुमति देता है, वह स्वयं को उन निधियों के उपयोग से वंचित करता है। वह ऐसा इसलिए करता है क्योंकि वह ब्याज लेता है जिसे निधियों के उपयोग के लिए एक प्रकार का किराया कहा जाएगा। उदाहरण के लिए, एक बैंक या एक ऋणदाता ब्याज के भुगतान पर धन उधार देता है। इस मामले में, जैसा कि पहले ही उल्लेख किया गया है, देनदार और लेनदार का कोई संबंध नहीं है।

130. अब हम हेल्सबरी, चौथे संस्करण, खंड 32, पैरा 108 का संदर्भ लेंगे:

108. जब ब्याज सामान्य विधि पर संदेय हो - सामान्य विधि में ब्याज देय है (1) जहाँ ब्याज का भुगतान करने के लिए स्पष्ट अनुबंध हो; (2) जहाँ ब्याज का भुगतान करने का अनुबंध पक्षकारगण के बीच लेन-देन के दौरान या लेन-देन की प्रकृति या संबंधित व्यापार या पेशे की प्रथा या प्रयोग से निहित हो सकता है; (3) कुछ मामलों में किसी संविदा के

भंग होने पर क्षतिपूर्ति के रूप में (केवल धन का भुगतान करने की संविदा को छोड़कर) जहाँ संविदा के निष्पादित होने पर पक्षकारगण के ज्ञान से वादी को ब्याज प्राप्त करने का अधिकार प्राप्त होता है।

उपर्युक्त मामले को छोड़कर, सामान्य विधि के अनुसार ऋणों पर ब्याज नहीं लगता है।"

उपभोग प्रतिभूति जमा उपर्युक्त श्रेणियों में से किसी के अंतर्गत नहीं आती है। पैरा 109 में कहा गया है:

- *न्यायोचित ब्याज का अधिकार* - साम्या में ब्याज की वसूली कुछ मामलों में की जा सकती है, जहाँ ऋणदाता और देनदार के बीच विशेष संबंध मौजूद हो, जैसे बंधककर्ता और बंधककर्ता, बंधपत्र पर बाध्यकर्ता और बाध्यी, व्यक्तिगत प्रतिनिधि और लाभार्थी, प्रमुख और प्रतिभू, विक्रेता और क्रेता, प्रमुख और एजेंट, सॉलिसिटर और ग्राहक, न्यासी और लाभार्थी, या जहाँ देनदार ऋणदाता के प्रति प्रत्ययी स्थिति में हो। ब्याज की अनुमति तब भी दी जाती है जब निश्चित समय के भीतर भुगतान न किए गए धन संबंधी विरासतों पर, भागीदारी के विघटन पर, वार्षिकी के बकाया पर जहाँ भुगतान में कदाचार या अनुचित देरी हुई हो, या धोखाधड़ी से प्राप्त या रखे गए धन के मामले में। यह तब भी दिया जाएगा जब प्रतिवादी को कुछ ऐसा करना चाहिए था जिससे वादी को सामान्य विधि के अंतर्गत ब्याज का हकदार होना चाहिए था, या उसने वादी को कुछ ऐसा करने से गलत तरीके से रोका हो जिससे वह ऐसा हकदार हो सकता था।"

131. यहाँ तक कि गलत तरीके से धन रोके रखने का मामला भी नहीं उठ सकता। *बंगाल नागपुर रेलवे बनाम रतनजी रामजी* मामले में यह प्रश्न उठा था कि क्या धन को गलत तरीके से रोके रखने के कारण

हुए नुकसान पर ब्याज देय था। यह अभिनिर्धारित किया गया कि: (अं.आ. पैरा 71-72)

हालाँकि, ब्याज अधिनियम में एक परंतुक है कि 'उन सभी मामलों में ब्याज देय होगा जिनमें यह अब विधि द्वारा देय है।' यह परंतुक उन मामलों पर लागू होता है जिनमें साम्या न्यायालय ब्याज देने के लिए अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करता है। जैसा कि *मेन एंड न्यू ब्रंसविक इलेक्ट्रिकल पावर कंपनी लिमिटेड बनाम एलिस एम हार्ट* में माननीय न्यायाधीश टॉमलिन ने टिप्पणी की थी:

‘साम्या के नियम का अवलंब लेने के लिए, सबसे पहले परिस्थितियों की स्थिति का अस्तित्व स्थापित करना आवश्यक है जो न्यायोचित अधिकार क्षेत्र को आकर्षित करती है, उदाहरण के लिए, किसी संविदा का गैर-निष्पादन जिसके लिए साम्या विशिष्ट निष्पादन दे सकती है।’

तथापि, वर्तमान मामला न्यायालय के न्यायोचित अधिकार क्षेत्र को आकर्षित नहीं करता है और यह परंतुक के दायरे में नहीं आ सकता है।”

19. इसी तरह (1998) 3 एससीसी 501 में प्रतिवेदित भारत संघ और अन्य बनाम ओरिएंट एंटरप्राइजेज और अन्य मामले में, उच्चतम न्यायालय ने ए.आई.आर. 1965 एस.सी. 1740 में प्रतिवेदित सुगनमल बनाम मध्य प्रदेश राज्य में संविधान पीठ के पहले के निर्णय का संदर्भ दिया और अभिनिर्धारित किया था कि आम तौर पर धन और ब्याज के प्रतिदाय के लिए परमादेश माँगने वाली रिट याचिका विचारणीय नहीं होगी, लेकिन निर्धारण की वैधता को चुनौती देने और प्रश्न उठाने वाला निर्णय विचारणीय है और परिणामी आदेश के रूप में, एक न्यायालय धन प्रतिदाय का निर्देश दे सकता है। हालाँकि, *ओरिएंटल*

एंटरप्राइजेज (पूर्वोक्त) के मामले में, उच्चतम न्यायालय ने स्पष्ट रूप से देखा कि एकत्र की गई राशि की देरी से प्रतिदाय पर ब्याज के भुगतान से राहत माँगने वाली रिट याचिका संधार्य नहीं हो सकती। *भारत संघ बनाम ई.मर्क / (1998)*

9 एस.सी.सी. 412 में उच्चतम न्यायालय ने निम्नानुसार टिप्पणी की है:-

"3. निस्संदेह, प्रत्यर्थी द्वारा अपनी रिट याचिका में किए गए ब्याज के दावे के लिए कोई कानूनी आधार नहीं है क्योंकि कानून में प्रतिदाय राशि पर ब्याज का भुगतान करने के लिए राजस्व विभाग पर दायित्व अधिरोपित करने वाला कोई उपबंध नहीं है। ब्याज के लिए प्रत्यर्थी का दावा भी किसी अन्य कानूनी उपबंध पर आधारित नहीं था।

4. संक्षेप में, रिट याचिका में स्पष्ट ब्याज के दावे को प्रस्तुत करने के लिए कोई कानूनी या विधिक आधार नहीं है, जो परमादेश रिट जारी करने का आधार प्रस्तुत कर सके। हम यह भी जोड़ेंगे कि अधिकरण के आदेश में स्वयं राजस्व विभाग की प्रत्यर्थी को कोई विशिष्ट राशि वापस करने की सटीक देयता का संकेत नहीं दिया गया है, जिससे अधिकरण के आदेश की तिथि पर कोई निर्दिष्ट राशि वापस करने की देयता उत्पन्न हो।

5. दूसरे शब्दों में, इस मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में, ऐसा कोई आधार नहीं है जिस पर राजस्व विभाग का किसी विशेष तिथि पर एक विशिष्ट धनराशि वापस करने का विधिक दायित्व उत्पन्न हुआ हो, जिससे परमादेश रिट जारी करने के लिए आवश्यक आधार प्रदान किया जा सके। इसलिए, वर्तमान मामले में प्रत्यर्थी की ओर से उठाए गए बड़े प्रश्न की परीक्षा करना अनावश्यक है कि वापस की गई अतिरिक्त शुल्क की राशि पर ब्याज के भुगतान की देयता, किसी दिए

गए मामले में, वापस की गई राशि पर ब्याज के भुगतान को निर्देशित करने के लिए परमादेश रिट जारी करने के लिए आधार प्रदान करने वाले विधिक दायित्व को जन्म दे सकती है।

20. (2000) 8 एससीसी 528 में प्रतिवेदित हिमाचल प्रदेश राज्य वित्तीय निगम, शिमला बनाम प्रेम नाथ नंदा और अन्य मामले में, उच्चतम न्यायालय ने एक बार फिर इस आधार पर ब्याज के दावे को अस्वीकार कर दिया कि ब्याज का भुगतान करने के लिए कोई कानूनी उपबंध या अनुबंध नहीं था। हालाँकि, न्यायालय ने उल्लेख किया कि उचित मामलों में किसी पक्ष को देय राशि को गलत तरीके से रोके रखने के लिए प्रतिकर या क्षतिपूर्ति के बदले ब्याज दिया जाएगा। इसके लिए, उच्चतम न्यायालय ने ए.आई.आर. 1961 एस.सी. 908 में प्रतिवेदित सतिंदर सिंह बनाम उमराव सिंह और (1975) 1 एस.सी.सी. 565 में प्रतिवेदित लक्ष्मीचंद बनाम इंदौर इंप्रूवमेंट ट्रस्ट पर भरोसा किया। उच्चतम न्यायालय ने (1999) 6 एससीसी 406 में प्रतिवेदित सोविलटॉर्ग (इंडिया) लिमिटेड बनाम स्टेट बैंक ऑफ़ इंडिया के मामले में एक अन्य निर्णय का संदर्भ दिया, जिसमें यह निम्नानुसार टिप्पणी की गई थी:

"6. सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 34 के उपबंधों पर भरोसा करते हुए, अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि अपीलार्थी उस दर पर ब्याज के भुगतान का हकदार था जिस दर पर वाणिज्यिक लेनदेन के संबंध में राष्ट्रीयकृत बैंकों द्वारा धन उधार दिया जाता है या अग्रिम दिया जाता है। इस न्यायालय में दायर अं.आ. सं. 2 और 1991 में जारी भारत में बैंकिंग विधि और व्यवहार का संदर्भ

देते हुए, उन्होंने प्रतिवाद किया था कि अपीलार्थी प्रति वर्ष 19.4 प्रतिशत की दर से न्यूनतम ब्याज के भुगतान का हकदार था। इस संबंध में किया गया सामान्य प्रस्तुतीकरण अधिनियम की धारा 14 के उपबंध को ध्यान में रखते हुए स्वीकार नहीं किया जा सकता है। विलंब से जमा किए गए धन पर या विपक्षी पक्षकार की ओर से सेवाएँ प्रदान करने में विलंब के कारण ब्याज के भुगतान के लिए पक्षकारगण के बीच कोई संविदा नहीं हुई थी। सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 34 के अंतर्गत ब्याज का दावा नहीं किया जा सकता है क्योंकि इसके उपबंधों को अधिनियम के अंतर्गत कार्यवाही के लिए विशेष रूप से लागू नहीं किया गया है। हालाँकि, हम पाते हैं कि धारा 34 का सामान्य उपबंध न्याय, समानता और अच्छे विवेक पर आधारित होने के कारण निवारण मंचों और आयोगों को प्रत्येक मामले की परिस्थितियों के अनुसार उचित रूप से ब्याज देने का अधिकार देता है। उचित मामलों में प्रतिकर या क्षतिपूर्ति के बदले में भी ब्याज दिया जाएगा। ब्याज न्यायोचित आधार पर भी दिया जा सकता है..."

21. याचिकाकर्ता ने 1 अप्रैल, 2001 के बाद की अवधि के लिए अधिनियम और संपत्ति कर उपनियम - 1994 के उपबंधों के अनुसार कर का भुगतान किया था। ये भुगतान संपत्ति कर के आकलन के लिए तत्कालीन प्रचलित उपबंधों के आधार पर याचीगण द्वारा स्वयं की गई गणना के अनुसार किए गए थे। इस बात पर भी कोई विवाद नहीं है कि याचीगण द्वारा भुगतान की गई राशि विधि के मौजूदा उपबंधों के अंतर्गत देय थी। वास्तव में संपत्ति का वार्षिक दर मूल्य वृद्धि के नोटिस के अनुसार बढ़ाया जाना था क्योंकि याचीगण को बढ़ा हुआ किराया मिल रहा था। हालाँकि, अधिनियम में किए गए संशोधनों और इकाई

क्षेत्र पद्धति को अपनाने के बाद, याचीगण को राहत मिली क्योंकि उन्होंने वार्षिक मूल्य के आधार पर निर्धारण का विकल्प चुना। इन परिस्थितियों में, मुझे नहीं लगता कि याचीगण, निर्धारण आदेश पारित होने से पहले, भुगतान की तिथि से, संपत्ति पर वार्षिक दर योग्य मूल्य के आधार पर उनके द्वारा भुगतान की गई राशि पर किसी भी ब्याज के हकदार हैं। अधिनियम में ऐसा कोई उपबंध नहीं है जो करदाता को ब्याज का दावा करने का अधिकार देता हो। संशोधित उपबंधों के अंतर्गत भी, निर्धारिती अपने द्वारा भुगतान किए गए अतिरिक्त कर पर ब्याज का हकदार नहीं है, जिसे अंतिम निर्धारण पर वापस किया जाना है।

22. विचार के लिए उठने वाला अगला प्रश्न यह है कि क्या याचीगण को बकाया मूल राशि पर कोई वादकालीन ब्याज दिया जाना चाहिए जो रिट याचिका दायर करने की तिथि से लेकर भुगतान/समायोजन की तिथि तक बकाया/असमायोजित रह गई थी। सामान्य तौर पर, यदि याचीगण ने वसूली के लिए सिविल वाद दायर किया होता, तो सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 34 लागू होती। रिट कार्यवाही में हालाँकि संहिता की धारा 34 सख्ती से लागू नहीं होती है, लेकिन उचित मामलों में रिट न्यायालय के पास वादकालीन और भविष्य के ब्याज को देने का विवेकाधिकार होता है।

23. इस प्रकार, जहाँ प्रत्यर्थी-निगम अधिनियम की धारा 123ख(9) के अंतर्गत अतिरिक्त भुगतान वापस नहीं करता है, वह निर्धारिती/करदाता द्वारा उक्त राशि के प्रतिदाय के लिए रिट याचिका या वाद दायर करने की तिथि से लंबित ब्याज का भुगतान करने के लिए उत्तरदायी हो सकता है। यह अभिवाक् कि अधिनियम में ब्याज के भुगतान के लिए कोई उपबंध नहीं है, रिट याचिका/वाद दायर

करने के बाद लागू नहीं होगी क्योंकि न्यायालयों को मुकदमा/रिट याचिका दायर करने की तिथि से ब्याज प्रदान करने का अधिकार है। हालाँकि, यह शक्ति विवेकाधीन है। वर्तमान मामले के तथ्यों और परिस्थितियों की परीक्षा करने और इसमें शामिल विभिन्न कानूनी उपबंधों की व्याख्या करने के बाद, मैं वर्तमान मामलों में किए गए अतिरिक्त भुगतान पर वादकालीन ब्याज प्रदान करने के लिए इच्छुक नहीं हूँ। मैं यह भी उल्लेख करूँगा कि यहाँ याचीगण भाग्यशाली रहे हैं और प्रत्यर्थी-एम.सी.डी. द्वारा उचित देखभाल और सतर्कता के साथ कार्य करने में विफलता को ध्यान में रखते हुए प्रतिदाय के हकदार हैं। भुगतान किया गया कर देय था। इसे विधि के अधिकार के अंतर्गत लगाया और एकत्र किया गया था। उपरोक्त तथ्यों को ध्यान में रखते हुए मैं अपने विवेक का प्रयोग करने और ब्याज नहीं देने के लिए इच्छुक हूँ। प्रत्यर्थी-एम.सी.डी. भी इस बात पर पूरी तरह से विश्वास करते थे कि अधिनियम की धारा 123ख(9) अनुप्रयोज्य नहीं थी।

24. जैसा कि विधि के उपबंधों की व्याख्या और स्पष्टीकरण किया गया है, यदि भविष्य में प्रत्यर्थी-निगम उचित समय के भीतर किए गए अतिरिक्त भुगतान को वापस नहीं करता है, तो सिविल न्यायालय या रिट न्यायालय अपने विवेकानुसार और विधि के अनुसार निर्धारिती/करदाता को वादकालीन या भविष्य का ब्याज देने के लिए सक्षम और हकदार होगा।

कर की दर

25. कर की दर का विवाद्यक, जहाँ निर्धारिती/स्वामी ने अधिनियम की धारा 116-छ(2) के अंतर्गत इकाई क्षेत्र पद्धति का विकल्प चुना है, इस न्यायालय के

एकल न्यायाधीश द्वारा रिट याचिका (सिविल) सं. 20255/2005, जिसका शीर्षक प्रमोद कुमार जैन बनाम दिल्ली नगर निगम है, में 18 नवंबर, 2005 के निर्णय के अंतर्गत पहले ही तय किया जा चुका है। निर्णय में दिल्ली नगर निगम (संशोधन) अधिनियम, 2003 द्वारा अधिनियम में संशोधन से पहले संपत्ति के आनुपातिक मूल्य की गणना करने के आधार और संशोधित उपबंधों के अंतर्गत वार्षिक मूल्य के निर्धारण के बीच अंतर दर्ज किया गया है। न्यायालय ने आनुपातिक मूल्य के आधार पर संपत्ति कर की गणना में आने वाली समस्याओं का उल्लेख किया क्योंकि इसके लिए वार्षिक किराये का निर्धारण करना आवश्यक था जिस पर भूमि या भवन को वर्ष-दर-वर्ष उचित रूप से किराये पर दिए जाने की उम्मीद की जा सकती थी। उक्त मूल्यांकनों के असमान परिणाम, विशेष रूप से हाल ही में खरीदी गई संपत्तियों के मामलों में, सर्वविदित हैं। पुरानी निर्मित संपत्तियों का निर्धारण बहुत कम आनुपातिक मूल्य पर किया जाता रहा। आनुपातिक मूल्य तय करने में विवेकाधिकार और भारी असमानता के कारण मुकदमेबाज़ी से समस्याएँ और भी जटिल हो गईं। न्यायालय ने उल्लेख किया कि 2003 के अधिनियम द्वारा संशोधन से पहले और बाद में, दोनों में कर की दर के संबंध में विशिष्ट उपबंध थे। अधिनियम की धारा 114 के अंतर्गत अपरिवर्तित उपबंधों के अंतर्गत कर की दर उस विशेष वर्ष के लिए निर्धारित कर की दर के आधार पर आनुपातिक मूल्य के 10%-30% के बीच हो सकती है। 2003 के संशोधन अधिनियम द्वारा धारा 114घ को पेश किया गया और इसमें प्रावधान किया गया कि *अन्यथा प्रावधान को छोड़कर, भवनों पर कर की न्यूनतम दर 6% होगी और अधिकतम दर उक्त भवनों के*

वार्षिक मूल्य का 20% होगी, जैसा कि निगम द्वारा समय-समय पर निर्दिष्ट किया जाएगा।

26. धारा 114 और 114घ के अंतर्गत कर की न्यूनतम और अधिकतम दरें निर्दिष्ट की गई हैं। ये भिन्न हो सकती हैं और वास्तव में हर वर्ष परिवर्तित हो रही हैं। प्रत्यर्थी- निगम को न्यूनतम और अधिकतम सीमा के भीतर कोई भी दर तय करने की स्वतंत्रता है। इन दरों को परिवर्तित किया जा सकता है और ये स्थिर या स्थायी नहीं हैं। प्रत्येक वर्ष के लिए कर की दर भिन्न हो सकती है। इस संबंध में विद्वान एकल न्यायाधीश ने अधिनियम की धारा 109 का संदर्भ दिया जो बजट अनुमानों को अपनाने का प्रावधान करती है जिन्हें अगले/आगामी वित्तीय वर्ष के लिए प्रत्येक वर्ष 15 फ़रवरी से पहले निर्धारित किया जाना चाहिए। इस प्रकार बजट अनुमानों को अपनाते समय प्रत्यर्थी- निगम किराये के मूल्य या वार्षिक मूल्य पर कर की दर भी निर्धारित करता है। इसके बाद, यह टिप्पणी की गई कि वार्षिक मूल्य और आनुपातिक मूल्य कर की दर से अलग हैं और इसलिए अपरिहार्य निष्कर्ष यह है कि किसी विशेष वर्ष में लागू कर की दर लागू होगी, भले ही किसी निर्धारिती ने अधिनियम की धारा 116छ(2) के अंतर्गत अपना विकल्प चुना हो।

27. श्री बी.बी. जैन, याचीगण के विद्वान अधिवक्ता, प्रमोद कुमार (पूर्वोक्त) के मामले में भी याचीगण के लिए पेश हुए थे, उन्होंने यह प्रतिविरोध किया था कि इकाई क्षेत्र पद्धति की शुरुआत के बाद, आवासीय/स्वयं के कब्जे वाली संपत्ति और आवासीय किराये पर दी गई संपत्तियों के लिए कर की दर समान है, लेकिन उपयोग कारक 2 पर लिया जाता है, जबकि स्व-कब्जे वाली संपत्तियों में

उपयोग कारक 1 के रूप में लिया जाता है। यह प्रस्तुत किया गया था कि चूँकि उपयोग कारक पहले से ही अधिक था, याचिकाकर्ता को इकाई क्षेत्र पद्धति शुरू होने पर लागू दरों के अनुसार कर का भुगतान करना चाहिए। इस तर्क पर विचार किया गया और दो आधारों पर इसे अस्वीकार कर दिया गया। सबसे पहले, किरायेदार संपत्तियाँ जहाँ किराया 3500/- रुपये प्रति माह से अधिक था, वास्तविक किराये पर आनुपातिक मूल्य के निर्धारण के अधीन थी और दूसरी बात, धारा 116छ(2) निर्धारिती को विकल्प देती है। इसलिए, निर्धारिती को यह निर्धारित करना होगा कि उसके लिए क्या अधिक लाभदायक होगा।

28. धारा 116छ(2) निर्धारिती को 1 अप्रैल, 2004 से पहले के वर्षों के लिए भी इकाई क्षेत्र पद्धति पर अपनी संपत्ति का निर्धारण कराने का विकल्प देती है, जहाँ 2003 के संशोधन अधिनियम के लागू होने की तिथि पर निर्धारण को अंतिम रूप नहीं दिया गया है। जैसा कि ऊपर उद्धृत किया गया है, धारा 116छ(2) की भाषा सीधी और स्पष्ट है। यह निर्धारिती को "वार्षिक मूल्य के आधार पर निर्धारित" कराने का विकल्प देती है। धारा 116छ(2) कर की दर के बारे में बात नहीं करती है जो कि निर्धारण किए गए वार्षिक मूल्य के आधार पर लगाया जाएगा। धारा 116क से ड वार्षिक मूल्य के निर्धारण की विधि और उन मापदंडों से संबंधित है जिन्हें ध्यान में रखा जाना चाहिए। दूसरी ओर, धारा 114घ और 114ड कर की दर से संबंधित हैं, लेकिन उक्त उपबंध 1 अगस्त, 2003 से लागू हुए हैं। इससे पहले, अधिनियम की धारा 114 में संपत्ति कर की दरें निर्दिष्ट की गई थीं। धारा 116-छ(2) कर की दर से संबंधित नहीं है या यह निर्धारित नहीं करती है कि इकाई क्षेत्र विधि की शुरुआत के बाद पहले वर्ष में

निर्दिष्ट कर की दर, 1 अप्रैल, 2004 से पहले के कर निर्धारण वर्षों के लिए भी लागू होगी। धारा 114घ और 114ड के अंतर्गत, कर की दर भिन्न वर्षों के लिए भिन्न हो सकती है और धाराएँ केवल न्यूनतम और अधिकतम कर दर के बारे में बताती हैं। कराधान विधि में, प्रत्येक वर्ष एक अलग और स्व-निहित अवधि होती है। किसी भी कर विधान में अनिवार्य रूप से कर लगाने के उपबंध, संगणना धाराएँ और वसूली के उपबंध होने चाहिए। संगणना उपबंध में आय, संपत्ति या उस मूल्य को निर्धारित करने की विधि और तरीके का प्रावधान है जिस पर कर का भुगतान किया जाना है। उसके बाद कर निर्धारित दरों के अनुसार निर्धारित राशि पर देय होता है। ये दो भिन्न और विशिष्ट चरण हैं जिन्हें उठाया जाना है।

29. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि **प्रमोद कुमार** (पूर्वोक्त) मामले में विद्वान एकल न्यायाधीश के निर्णय पर विचार करने की आवश्यकता है क्योंकि विद्वान एकल न्यायाधीश ने अधिनियम की धारा 164 के प्रभाव की परीक्षा नहीं की है जो उन मामलों में कर की छूट, प्रतिदाय का प्रावधान करती है जहाँ संपत्ति लगातार 60 या उससे अधिक दिनों तक खाली और अनुत्पादक रही हो। अधिनियम की धारा 164 1 अगस्त, 2003 से समाप्त हो गई है और जिस तिथि को निर्धारण आदेश पारित किए गए थे, उस दिन उक्त उपबंध कानून में नहीं था। यह लागू नहीं होता था। उक्त उपबंध आनुपातिक मूल्य पद्धति के अंतर्गत किए गए निर्धारण पर लागू होता है और इकाई क्षेत्र पद्धति के अंतर्गत गणना किए गए निर्धारण पर लागू नहीं होता है। इकाई क्षेत्र पद्धति के अंतर्गत खाली/अनुत्पादक संपत्ति के मामले में उपयोग कारक 1 के रूप में लिया

जाता है। वर्तमान मामले में यह भी उल्लेख किया जाएगा कि दोनों याचीगण अधिनियम की धारा 164 में निर्दिष्ट आवश्यकताओं को पूरा नहीं करते हैं, इससे पहले इसे हटा दिया गया था।

30. याचिकाकर्ता सुश्री रितु सेनगुप्ता ने आरोप लगाए हैं कि उसके द्वारा देय कर के बारे में गलत गणना की गई है और प्रतिदाय की राशि की गलत गणना की गई है। यह कहा गया है कि प्रतिदाय की राशि 3,76,941/- रुपये है न कि 3,01,5522/- रुपये। प्रत्यर्थी-निगम ने प्रति शपथपत्र में उक्त प्रतिविरोध का स्पष्ट रूप से उत्तर नहीं दिया है और न ही उससे निपटा है। याचिकाकर्ता सुश्री रितु सेनगुप्ता इस निर्णय की तिथि से तीन सप्ताह की अवधि के भीतर प्रत्यर्थी-निगम को इस संबंध में एक अभ्यावेदन देंगी और प्रत्यर्थी-निगम उक्त अभ्यावेदन प्राप्त होने के चार सप्ताह के भीतर इस पर विचार करते हुए एक आदेश पारित करेगा। प्रत्यर्थी-निगम आज से दो सप्ताह के भीतर याचिकाकर्ता श्री आशीष गोयल द्वारा भुगतान की गई 8,23,060/- रुपये की अतिरिक्त राशि से किए गए समायोजन की गणना भी करेगा और उसके बाद चार सप्ताह के भीतर शेष राशि वापस करेगा। यदि अतिरिक्त असमायोजित राशि का भुगतान छह सप्ताह के भीतर नहीं किया जाता है, तो प्रत्यर्थी-निगम इस निर्णय/आज के पारित होने की तिथि से भुगतान तक प्रतिदाय की शेष राशि पर 12% प्रति वर्ष की दर से ब्याज का भुगतान करने के लिए उत्तरदायी होगा। तदनुसार रिट याचिकाओं का निपटान किया जाता है।

मामले के तथ्यों और परिस्थितियों को देखते हुए, जुर्मानों के संबंध में कोई आदेश नहीं होगा।

(संजीव खन्ना)

न्यायाधीश

1 अगस्त, 2008

पी

(Translation has been done through AI Tool: SUVAS)

अस्वीकरण : देशी भाषा में निर्णय का अनुवाद मुकद्दमेबाज के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा। समस्त कार्यालयी एवं व्यावहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेजी स्वरूप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।